कबीर के दोहे

साक्षी से क्या अभिप्राय है 'साखी' शब्द, संस्कृत के 'साक्षी' का अपभ्रंश रूप है। साक्षी से अभिप्राय जीवन के उस प्रत्यक्ष अनुभव से है जिसका साक्षात्कार करके कवियों ने जनता के समक्ष उसे उपदेश रूप में व्यक्त किया तथा ज्ञान, भक्ति एवं वैराग्य -विषयक अपनी सच्ची धारणा प्रकट की। साखी का प्रयोग संतों की उस छंद रचना अर्थात दोनों के लिए होता है। जिसमें उन्होंने अपने व्यवहारिक अनुभवों को अभिव्यक्ति दी और जिसकी सत्यता के लिए वे स्वयं साक्षी थे।

1) "सतगुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार।
लोचन अनंत उघाडिया, अनंत दिखावण हार।"

प्रस्तुत पद कबीर दास के दोहे से ली गई है। इस अंस में कबीर ने गुरु की महत्ता का प्रतिपादन किया है। कबीर दास की भक्ति में गुरु को अत्यधिक महत्व प्रदान किया गया है। कबीर ने गुरु को सतगुरु के नाम से अभी भी किया है। तथा उनकी अनंत महिमा का गुणगान किया है। क्योंकि वह अनंत उपकार करने वाला है। उसमें अनंत दृष्टि प्रदान करने की शक्ति होती है, और वह उस अनंत एवं आसीम ब्रह्म का साक्षात्कार कराने में समर्थ होता है। सद्गुरु अपने शिष्य को ज्ञान का ऐसा दीपक प्रदान करता है जिससे वह ठीक मार्ग पर चल सके और वेद-विहित एवं लौकिक मार्ग का आंख बंद करके अनुसरण न करें। यदि सद्गुरु से भेंट होती है तो भक्ति के मार्ग में कोई भी साधक सफल हो जाता है। कबीर दास गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए कहते हैं कि मेरे गुरु ने मुझ पर अनंत उपकार किया है। उनकी महिमा का मैं कितना गुणगान करूं। गुरु की कृपा से संसार की आसारता का दर्शन हुआ है। गुरु के कृपा के कारण ही मेरे आंखों पर पढ़ी हुई माया मोह की जो छलनी है वह दूर हो सकी है। और उन्होंने संसार की वास्तविक रहस्यों का उद्घाटन कर दिया है। वही जीवन के वास्तविक रहस्य को दिखाने वाले हैं।

2) "सुखिया सब संसार है खावे अरू सोवै। दुखिया दास कबीर है जागे अरु सोवै।"

कबीरदास जी कहते हैं कि संपूर्ण संसार सुखी है जो भोग विलास का जीवन व्यतीत कर अज्ञान रूपी रात्रि में सोते हैं अर्थात वे इस मिथ्या जगत के फेरे में पढ़ कर खा कर आराम से सुख की नींद सोते हैं। दुखी तो कबीर है जो ज्ञान प्राप्ति के लिए जागते हैं और उस ज्ञान के माध्यम से ब्रह्म-मिलन न होने पर रोते हैं। अर्थात कबीर ईश्वर को पाने के फेर में रात भर जागता है और प्रभु के न मिलने पर दुखी होता है।

3) "बिरहा बुरहा जिनी कहो बिरहा है सुल्तान।"

कबीर के इस पद में भावनात्मक रहस्यवाद देखने को मिलता है। दार्शनिकों ने परमात्मा को पुरुष और जगत को नारी रूप कहा है। कबीर ने भी परमात्मा को प्रियतम और स्वयं को प्रेयसी के रूप में माना है। उनकी जीव आत्मा रूपी पत्नी अपने परमात्मा रूपी पुरुष से मिलने के लिए व्याकुल बनी रहती है। उनका परमात्मा से आशय है कबीर स्वयं को विरहिणी कहता है। कबीर दास विरह को ईश्वर से मिलाने वाला कहता है। कबीर कहते हैं बिरहा को बुरा मत कहो क्योंकि वह तो प्रेम रूपी हृदय में विराज करने वाला सुल्तान है। जिस हृदय में ईश्वर के प्रति विरह नहीं होता वह हृदय तो शमशान के समान होता है। जिस घर में विरह का वास नहीं होता वह घर या हृदय एक मसान की तरह होता है। इसी कारण कबीर दास कहते हैं कि ईश्वर के इस बिरह को साधारण विरह मत कहो क्योंकि यह विरह तो स्वयं ईश्वर रूप है। जिस विरह में जिस हृदय में वही नहीं उस हृदय को तो श्मशान समझना चाहिए। विरह तो परब्रह्म के तेज में लीन करने वाला होता है। कबीर ने अपने प्रिय अर्थात ईश्वर से मिलने के लिए इस विरह की शरण ली है और रात दिन इसी आध्यात्मिक बिरह में लीन रहकर कष्ट उठाते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

4) "राम नाम के पंटतरे देवै को कछु नाही।

प्रस्तुत अंश कबीर की साखी से लिया गया है। इस पद में उन्होंने गुरु की महिमा का वर्णन किया है। कबीरदास कहते हैं कि गुरु जी ने राम नाम रूपी अनमोल रत्न को कृपा बस मुझ अज्ञानी को दान में दिया है। इस अनमोल रत्न के समान संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो मैं दक्षिणा के रूप में अपने गुरु को दे सकूं। और मन में संतोष की प्राप्ति कर सकूं क्योंकि गुरु ने ज्ञान रूपी जो दान मुझे दिया है।वह इतना मूल्यवान है। कि मुझे निर्धन के पास बदले में चुकाने के लिए उतना मूल्यवान कुछ भी

नहीं है। इतने अमूल्य ज्ञान के लिए मैं अपने गुरु का सदैव आभारी रहूंगा।